56वाँ

समय के साखी

प्रगतिशील साहित्यिक पत्रिका

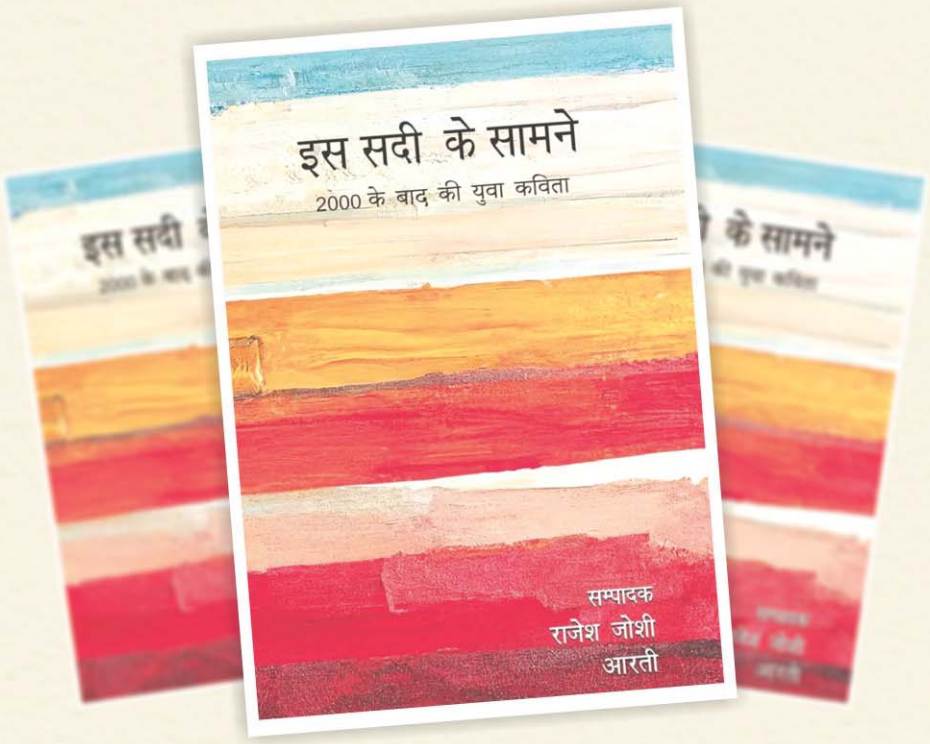

पुस्तक प्राप्त करने के लिए

https://www.amazon.in/dp /938937393X

परामर्श
राजेश जोशी
रामप्रकाश त्रिपाठी
सेवाराम त्रिपाठी

आवरण और भीतर के चित्र
देवीलाल पाटीदार

संपादक
आरती

देवीलाल पाटीदार राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित चित्रकार, मूर्तिकार व सेरामिक कलाकार हैं।

फाइन आर्ट्स कॉलेज, इंदौर से फाइन आर्ट्स में डिप्लोमा के बाद भारत भवन भोपाल में शामिल हुए और आदिवासी कला का दस्तावेजीकरण के लिए बनाई गई कोर टीम के सदस्य बने।

आप 'न्यू वेब फेस्टिवल, मेलबर्न, ऑस्ट्रेलिया सहित कई प्रतिष्ठित कार्यक्रमों में शामिल हुए। 'Bilkool' समकालीन भारतीय कला द्वारा आयोजित प्रदर्शनी 2000, ललित कला अकादमी नई दिल्ली द्वारा 2001 में आयोजित 'अंतर्राष्ट्रीय सिरेमिक शिविर', भूकंप पीड़ितों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सिरेमिक प्रदर्शनी संयुक्त रूप से भारतीय-अमेरिकी कलाकार शो 2001 और कई अन्य में सहभागिता।

आपके कामों की कई एकल प्रदर्शनियां भी आयोजित हुई हैं।

पारंपरिक कारीगरों के साथ पहला टेराकोटा गार्डन नॉर्थ ज़ोन कल्चरल सेंटर, इलाहाबाद में बनाया है। भोपाल के भरत भवन में कई राष्ट्रीय कार्यशालाएं आयोजित।

देवीलाल पाटीदार भारत भवन, भोपाल में 'ग्राफिक्स और सेरामिक्स विभाग' के पूर्व प्रमुख रहे हैं।

मोबाइल- 94244 17339

समय के साखी
अप्रैल-जून 2025

UPI - 9713035330
(फोनपे, पेटीएम, गूगलपे)

******5330

यह अंक Notnull.com पर उपलब्ध है।

यह अंक : 200/- (डाक खर्च सहित)

सदस्यता

आजीवन : 5000/- (व्यक्तिगत)
: 8000/- (संस्थाओं के लिए)
एक साल : 700/- मात्र
दो साल : 1400/- मात्र
संस्थाओं के लिए यह अंक 250/- (डाक खर्च सहित)

समस्त भुगतान 'समय के साखी' के नाम स्वीकार्य होंगे। खाता क्रं. 451702011003868, IFSC Code UBINO545171 'समय के साखी' नामे, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, शाखा-अरेरा कॉलोनी, भोपाल में जमा कर सकते हैं।

संपादकीय कार्यालय :
701, अन्नपूर्णा परिसर, पीएण्डटी चौराहा के पास,
भोपाल (म.प्र.) 462003
मो. - 9713035330
Email : samaysakhi@gmail.com

आकल्पन : गणेश ग्राफिक्स, भोपाल

प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी आरती द्वारा गणेश ग्राफ़िक्स, देशबंधु भवन, प्रथमतल, 26 बी, प्रेस काम्प्लेक्स, एम. पी. नगर जोन-1, भोपाल से मुद्रित कराकर 701, अन्नपूर्णा कॉम्पलेक्स, पी.एण्ड.टी चौराहा के पास, भोपाल-3 (म.प्र.) से प्रकाशित।

नोट : किसी भी प्रकार के विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र, भोपाल (म.प्र.) होगा।
सर्वाधिकार सुरक्षित - संपादक/प्रकाशक

क्रम

मेरे शब्द - **पत्रिका है, लेकिन एक कमिटमेंट भी है** 04

धरोहर : **त्रिलोचन** : तुलसीदास, निराला और गालिब को बार-बार पढ़ना जरूरी है 07

बातचीत : **तमिल उपन्यासकार पोन्नीलन से विनीत तिवारी** 19

तहकीकात : **रणेंद्र** : तुलनात्मक साहित्य : एक अंतर-अनुशासनिक दृष्टिकोण 27

कविताएँ 41

प्रियंका सोनकर की छह कविताएँ, **जावेद आलम** की सात कविताएँ
गोलेन्द्र पटेल की सात कविताएँ, **विशाखा मुलमुले** की पाँच कविताएँ
गुंजन उपाध्याय पाठक की छह कविताएँ, **सुनीता मंजू** की सात कविताएँ
कंचन कुमारी की चार कविताएँ, **भवेश दिलशाद** की छह ग़ज़लें

कहानियाँ 71

प्रदीप्त प्रीत : हॉस्टल, घर, सपनों वाली आवाज़ उर्फ़ रत्ती भर सच 71

गोविन्द निषाद : रहना नहिं देस बिराना है 89

और कविताएँ 107

जसवीर त्यागी की नौ कविताएँ, **ललन चतुर्वेदी** की चार कविताएँ
महेश कुमार केशरी की आठ कविताएँ, **साजिद प्रेमी** की पाँच ग़ज़लें

रूसी कहानी : अनुवाद- **नरेंद्र जैन** 117

घुमक्कड़ी **: मोहनदास नैमिशराय :** श्रीलंका में बौद्ध धम्म,साहित्य और संस्कृति 128

सिनेमा-साहित्य : **रक्षा गीता** : सत्यजीत राय के वाजिद अली शाह 132

समीक्षाएँ **137**

गौहर रज़ा की किताब 'मिथकों से विज्ञान तक' : **अनिमेश मुखर्जी** 137

हरिओम राजोरिया की किताब : 'मैं गायक बनना चाहता था' : **केतन यादव** 142

अनुज लुगुन की किताब : 'अघोषित उलगुलान' : **वेद प्रकाश सिंह** 145

शेफाली शर्मा की किताब : 'सॉरी आर्यभट्ट सर' : **मोहन कुमार डहेरिया** 149

ज्योति रीता की किताब : 'अतिरिक्त दरवाजा' : **पवन करण** 153

नेहा नरूका की किताब : 'फटी हथेलियाँ' : **जितेन्द्र विसारिया** 156

नेहल शाह की किताब : 'और इन सब के बीच' : **निखिल कुमार** 161

बानू मुश्ताक़ को बुकर पुरस्कार पर खास रिपोर्ट : **अरुण जी** 165

पत्रिका है, लेकिन एक कमिटमेंट भी है

एक ऐसे समय में जो निश्चित ही तकनीक का है। आधुनिकता जो विज्ञान की आँखों से देखते हुई आनी थी, उसने रास्ते में विज्ञान से अपना हाथ छुड़ा तकनीक की बाँह पकड़ ली है। सब कुछ एक जैसा दिखाई दे रहा है। मोबाइल की स्क्रीन पर डूबे हुए एक जैसे लोग, एक जैसे घर और उनके भीतर एक जैसी मशीनें हैं। आधुनिकता और उत्तर-आधुनिकता को लेकर साहित्य के भीतर खूब बातें और लंबी बहसें चली थीं। इन दोनों शब्दों को विज्ञान और तकनीक के समानार्थक और विरोधार्थक बायनरी के रूप में देखा जा सकता है। आधुनिकता का साधारण अभिप्राय बाहरी बदलावों में ही माना जाने लगा। गैजेट्स से लदा-फदा आदमी आधुनिक है? यह उसी तरह से प्रश्नांकित होने वाला शब्द टर्म है जैसा कि 'सभ्यता और संस्कृति'। सभ्यतागत प्रतीकों ही संस्कृति मान लिया गया और चंदन, टोपी, गाय, गोबर और झंडा, सैनिक जैसे फसाद भी उगने लगे। त्योहारों का अर्थ मेल-मिलाप की जगह डेक-डीजे हो गया। कहने अभिप्राय सिर्फ यह है कि तकनीकी ने चीजों को सरलतम बनाने की प्रक्रिया में बौद्धिकता के स्पेस को बहुत जटिल बना दिया है।

मैं किताबों के संदर्भ में भी बात कर रही हूँ। यह बात भी तकनीकी सूचना माध्यमों के द्वारा प्रचारित कि गई हैं कि लोग किताबें नहीं पढ़ते। वे किंडल, पीडीएफ आदि माध्यमों से पढ़ना पसंद करते हैं। खासतौर पर युवा पीढ़ी। एक हद तक यह सही भी है, खासतौर पर हिंदी प्रदेशों के लिए। लेकिन इसके साथ यह भी सच है कि किताबें पढ़ने वाले और उस पर भी साहित्य की किताब पढ़ने वाले कभी भी ज्यादा लोग नहीं रहे। जिन किताबों को किसी न किसी मिशन (धर्म, संस्था) से जोड़ दिया गया वे ही अधिकांश बैठकों में पहुँचीं। रामचरितमानस तो सीधे पूजा घर में पहुँच गई। और दूसरी तरफ उसी के समानांतर कबीर रचनावली कितने घरों में मिलेगी?

जबकि व्यक्ति, समाज और बेलौसपने की कसौटी पर देखेंगे तो कबीर बार-बार पहले नंबर पर ही रखे जाएँगे। रामचरितमानस की तुलना में उसकी बिक्री अधिक से अधिक दस प्रतिशत ही होगी। अब यहाँ पर प्रश्न लोकप्रियता है और विशिष्टता का भी। दूसरी तरफ एक प्रकाशक के द्वारा हिंदी के लोकप्रिय कवि विनोद कुमार शुक्ल को साल में 30 लाख रुपए की रॉयल्टी देने का दावा किया जा रहा है!!!! यह बात किसी के दिमाग को पच नहीं रही। जिस तरह की इमेज प्रकाशको ने हिंदी किताबों की बनाई, वहाँ यह एक बड़े आश्चर्य की तरह है। यही तकनीक अचानक एक दिन यह भी कहने लगी कि लोग खूब किताबें पढ़ रहे हैं। हिन्दी की भी।

एक ही समय कितने तरह के विरोधाभासों का समय होता है!

खैर मैं अभी अपने विषय की ओर आती हूँ। तो मेरा संबंध जिन गाँवों, कस्बों से रहा, रिश्तेदारों के भी घरों से वहाँ मैंने रामचरितमानस, गीता और पूजा पाठ के अलावा कोई किताब किसी को खरीदते, पढ़ते नहीं देखी। इसमें कल्याण को और जोड़ सकते हैं। मुझे खुद किसी ने कोई किताब तोहफे पर नहीं दी। शिक्षा की सरगर्मी के बाद पढ़ने का अर्थ सिर्फ कोर्स की किताबें पढ़ना था और उद्देश्य सिर्फ रोजी-रोटी हासिल करना। इस भाव में, इस महाद्वीप में तो एक जैसा ही बर्ताव रहा है। आज भी लेखक अपनी पहचान बताते हुए झिझकता है। उसके लेखनकर्म को अनसुना करते हुए पूछा जाता है- 'और' क्या करते हैं? यह 'और' आर्थिक पक्ष की व्याख्या चाहता है। यहाँ मैं जिस क्षेत्र की बात कर रही हूँ वह कोई मुट्ठी भर लोगों का समूह नहीं है। वह मध्य प्रदेश का एक अच्छा खासा बड़ा भूभाग है। उसमें उत्तर प्रदेश का भी एक हिस्सा शामिल है जितना मैंने अपने रिश्तेदारों के माध्यम से नज़दीक से देखा है। फिर हम चलते हैं 70, 80 के दशक में। घोस्ट रायटरों के द्वारा लिखे जा रहे आज की वेब सीरीज के जैसे उपन्यास तो, वह भी महानगर और शहर के पाठक ही पढ़ते थे। जिन दिनों में धर्मयुग, सारिका अधिकांश शहरी बैठकों में पहुँचती थीं, उनके भीतर सबके आस्वाद के लिए सामग्री भी रखी होती थी। खाना बनाने की विधियाँ और स्वेटर की डिजाइनें भी। प्रश्न यहाँ निरे साहित्य का है? और उसकी उपयोगिता का भी है? साहित्य की उपयोगिता यानी अपने समय में हस्तक्षेप करने वाली प्रवृत्ति की तहकीकात। यहाँ मैं जब साहित्य कहती हूँ तो मेरे सामने निराला, प्रेमचंद, महादेवी, मुक्तिबोध, राहुल सांकृत्यायन, गोरख पांडेय का लिखा खड़ा होता है। और इस साहित्य में रचे गए समाज के सपने को साकार करने के लिए खड़े गाँधी, आंबेडकर, फुले युगल के दुस्साहस शामिल होते हैं।

यूँ भी देखें कि साहित्य को सिर्फ़ कविता के टुकड़े समझते हुए फूल पत्तियों से सजे पोस्टर और इंप्रेस करने के साधन न समझा जाए। यदि इसका अधिकांश क्षेत्र कविता और कहानी घेरते भी हैं तो उतना ही अधिक हस्तक्षेप भी है। उदाहरण के लिए- जब कविता कहती है-
'पढ़ाते-पढ़ाते सुर बदल जाता है मास्टर जी/
आदिवासी धामना खाते हैं/ तू खाया है बे कभी/
साँप खाने वाले बच्चे भी जहरीले होते हैं/
इतना कहकर मास्टर जी हँस पड़ते हैं... (पूनम वासम, पिछले अंक से)
क्या ये लाइनें ताली बजाने के लिए हैं?

सिर्फ साहित्य ही नहीं कला के सभी अनुशासन मनोरंजन के लिए नहीं हैं। फिलिस्तीन की घटनाओं की तस्वीरें हों या मणिपुर के राहत कैंप या पहलगाम आतंकी हमले के शब्दचित्र; दिल-दिमाग को हिला देते हैं।

•••

हमने पिछले अंक में मदद की अपील की थी और हमारी सामूहिक कोशिशों का नतीजा यह अगला अंक आपके सामने है। तो सबसे पहले सफ़र के सहयोगियों का बहुत-बहुत शुक्रिया।
यह पत्रिका तो है, लेकिन एक कमिटमेंट भी है। अपने समय के साथ किया हुआ। पैदल सा सफर है यह। यहाँ दौड़ सकने की उम्मीद बेमानी है। मेरे अपने समय को मैं कठिन समय कहूँगी (मैंने इस वाक्य से हमेशा बचने की कोशिश की है लेकिन फिलिस्तीन, यूक्रेन, मणिपुर, कश्मीर, अलीगढ़ के बाद) क्योंकि नफ़रत, हिंसा, युद्ध हमारे समय के सच हैं। इन्हें समझने के लिए और समझाने के लिए भी 'पत्र-पत्रिकाएँ' हमारे पास एक औज़ार की तरह होते है। इस प्रयास में और लोगों के साथ जुड़ने की जरूरत है।

-आरती